सिविल विविध

रणजीत सिंह सरकारिया न्यायमूर्ति के समक्ष .

जगजीत सिंह मरवाहा - याचिकाकर्ता

बनाम

हरियाणा राज्य और अन्य - *उत्तरदाता*

1968 की सिविल रिट संख्या 767

21 मई, 1968

*पंजाब नगरपालिका अधिनियम (1911 का III) - धारा 16 (1) (सी), 20 और 24 (1) - नगरपालिका चुनाव नियम (*1952) - *नियम* 5 *और* 47 (2*)* - नगरपालिका समिति के निर्वाचित अध्यक्ष - शपथ का प्रशासन - क्या पद ग्रहण करने के लिए एक पूर्व शर्त है - ऐसा राष्ट्रपति - क्या वह अपने चुनाव की तारीख से कार्य करना शुरू कर सकता *है* - धारा 24 (*1*) - *अधिनियम की धारा* 16(1) *और* 20- *चाहे निर्देशिका के प्रावधान हों- क्या यह शक्ति के घोर दुरुपयोग के समान है।*

अभिनिर्धारित किया गया कि पंजाब नगरपालिका अधिनियम, 1911 की धारा 24 की उप-धारा (1) का निषेधात्मक भाग, जो पद ग्रहण करने के लिए शपथ लेने को एक पूर्व शर्त बनाता है, समिति के निर्वाचित अध्यक्ष पर लागू नहीं होता है, इसका संचालन केवल 'सदस्य' तक ही सीमित है। इस भेद के पीछे कारण यह प्रतीत होता है कि एक सदस्य जो निर्वाचित राष्ट्रपति है, उसने समिति के सदस्य के रूप में अपने कर्तव्यों में प्रवेश करने से पहले ही निष्ठा की शपथ ले ली थी। उनके मामले में राष्ट्रपति के रूप में अपने कर्तव्यों में प्रवेश करने से पहले उन्हें फिर से वही शपथ लेने के लिए कहना महज एक मूर्खता होगी। यही कारण है कि धारा 24 की उपधारा (1) के दूसरे भाग में 'सदस्य' शब्द के तुरंत बाद या उसमें निर्धारित शपथ के रूप में 'या राष्ट्रपति' शब्द को दोहराया नहीं गया है।

(पैरा 15)

अभिनिर्धारित किया गया है कि एक सदस्य के मामले के विपरीत, जो अधिसूचना के प्रकाशन के बाद और निष्ठा की शपथ लेने के बाद ही अपने कर्तव्यों में प्रवेश कर सकता है, निर्वाचित राष्ट्रपति अपने चुनाव

की तारीख से नगरपालिका चुनाव नियम, 1952 के नियम 47 (2) के तहत इस शर्त के अधीन कार्य करना शुरू कर सकता है कि यदि उसका चुनाव राज्य सरकार द्वारा अस्वीकार कर दिया जाता है तो वह कार्य करना बंद कर देगा।

(पैरा 18)

अभिनिर्धारित किया गया कि अधिनियम की धारा 24 (1) एक सार्वजनिक कार्य करने के लिए केवल एक औपचारिकता निर्धारित करती है, अर्थात्, चुनाव के परिणाम का प्रकाशन। इसलिए, यह प्रावधान केवल निर्देशिका है, खासकर जब विधायिका ने कानून में स्पष्ट रूप से कुछ भी निर्धारित नहीं किया है कि राष्ट्रपति ऐसे प्रकाशन के बाद ही पद ग्रहण करेगा।

(पैरा 21)

यह माना गया कि सरकार द्वारा उनके नाम को अनुमोदित करने और राजपत्र में प्रकाशित करने से पहले राष्ट्रपति के रूप में उनके कर्तव्यों को दर्ज करने में अधिनियम के निर्देशिका प्रावधान का उल्लंघन करना धारा 16 (1 (सी) और धारा 20 के चिंतन के भीतर 'सदस्य के रूप में उनके पद का घोर दुरुपयोग' या 'शक्ति का दुरुपयोग' नहीं कहा जा सकता है अधिनियम, 1911 की क्रमशः

(पैरा 34)

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत याचिका, *जिसमें प्रार्थना की गई है कि 21 फरवरी 1968 के आदेश को रद्द करते हुए* सर्टिओररी, परमादेश *या किसी अन्य उपयुक्त रिट, आदेश या निर्देश की* प्रकृति में एक रिट जारी की जाए।

याचिकाकर्ता की ओर से राजिंदर सच्चर, एडवोकेट।

जी.सी. महाधिवक्ता (हरियाणा) जी.पी. जैन और जी.सी. उत्तरदाता संख्या 2 के लिए गार्ग, वकील।

निर्णय

सरकारिया न्यायमूर्ति- यह भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के तहत एक याचिका है, जिसमें याचिकाकर्ता को नगरपालिका समिति शाहाबाद के अध्यक्ष पद / सदस्यता से हटाने के लिए हरियाणा सरकार के 21 फरवरी, 1968 के आदेश को रद्द करने के लिए *सर्टिओरेरी, परमादेश* या किसी

अन्य उपयुक्त रिट, आदेश या निर्देश की रिट जारी करने की मांग की गई है। और आगे उन्हें दो साल की अवधि के लिए नगरपालिका समिति के भविष्य के चुनाव के लिए अयोग्य घोषित कर दिया जाए ।

2. तथ्य इस प्रकार हैं :-

नगरपालिका समिति, शाहाबाद के चुनाव मई 1964 में हुए। याचिकाकर्ता निर्वाचित सदस्यों में से एक था, जिसकी कुल संख्या 13 थी। नगरपालिका समिति के अध्यक्ष पद के लिए चुनाव जुलाई 1964 में हुआ। श्री रघबीर चंद को अध्यक्ष और श्री खरैती लाई को उपाध्यक्ष चुना गया। उपाध्यक्ष श्री खरैती लाई का कार्यकाल जुलाई, 1966 में समाप्त हो गया। तथापि, तत्कालीन राष्ट्रपति श्री रघबीर चंद ने उपाध्यक्ष के चुनाव के उद्देश्य से बैठक बुलाने से मना कर दिया था। 1966 की रिट याचिका संख्या 2152 में इस न्यायालय द्वारा जारी एक निर्देश के अनुपालन में, 10 अप्रैल, 1967 को बैठक आयोजित की गई थी, और याचिकाकर्ता की पार्टी से संबंधित श्री नरसिंह दास को उपाध्यक्ष के रूप में चुना गया था।

3. राष्ट्रपति का कार्यकाल जुलाई 1967 में समाप्त हो गया और राष्ट्रपति का चुनाव करने के लिए 1 अगस्त, 1967 को विधिवत बैठक बुलाई गई। उक्त बैठक में याचिकाकर्ता को निर्वाचित घोषित किया गया। इसके बाद, श्री खरैती लाई और पांच अन्य लोगों ने नगरपालिका समिति के अध्यक्ष के रूप में याचिकाकर्ता के चुनाव को चुनौती देने के लिए उच्च न्यायालय में 1967 की रिट याचिका संख्या 1788 स्थापित की। इस याचिका को *1 सितंबर, 1967 को* खारिज कर दिया गया था।

4. 1 अगस्त 1967 को राष्ट्रपति के रूप में याचिकाकर्ता के चुनाव के परिणाम को नगरपालिका समिति के उपाध्यक्ष द्वारा चुनाव के कुछ दिनों के भीतर उप-विभागीय अधिकारी को विधिवत सूचित किया गया था।

5. हालांकि, याचिकाकर्ता ने 1 सितंबर, 1967 को 1967 की रिट याचिका संख्या 1788 के निर्णय के बाद तक राष्ट्रपति के कार्यालय के कर्तव्यों का पालन करना शुरू नहीं किया। याचिकाकर्ता को सलाह दी गई थी कि यद्यपि उनके नाम को राजपत्रित किया जाना था और उन्हें पंजाब नगरपालिका अधिनियम, 1911 (इसके बाद अधिनियम के रूप में संदर्भित) की धारा 24 के अनुसार आवश्यक पद की शपथ लेनी थी, लेकिन यह उन्हें राष्ट्रपति के रूप में कार्य करने से नहीं रोकता था। उप-विभागीय अधिकारी से 19 अक्टूबर, 1967 को एक ज्ञापन प्राप्त होने तक उप-विभागीय अधिकारी या उपायुक्त द्वारा राष्ट्रपति के रूप में याचिकाकर्ता के कामकाज पर कोई आपत्ति नहीं की गई थी। इससे पहले 26 सितंबर, 1967 को उपायुक्त ने विधिवत सिफारिश की

थी कि समिति के अध्यक्ष के रूप में याचिकाकर्ता का नाम राजपत्रित किया जाए। इस प्रस्ताव को निदेशक, स्थानीय शहरी निकाय द्वारा 21 अक्टूबर, 1967 को अनुमोदित भी कर दिया गया था। निदेशक के दिनांक *21* अक्टूबर, **1967** के ज्ञापन सं. 3063/ए2 के माध्यम से मुद्रण एवं लेखन सामग्री नियंत्रक, हरियाणा को इसकी सूचना दी गई।

6. 19 अक्तूबर, 1967 के ज्ञापन के उत्तर में, याचिकाकर्ता ने उप-विभागीय अधिकारी को दिनांक 25 अक्तूबर, 1967 के अपने पत्र (अनुलग्नक ए-1) के माध्यम से लिखा कि वह राजपत्र में राष्ट्रपति के रूप में अपने निर्वाचन के प्रकाशन और अधिसूचना से पहले ही राष्ट्रपति के रूप में कार्य करने के लिए सक्षम थे। याचिकाकर्ता का नाम 31 अक्टूबर, 1967 को हरियाणा सरकार के राजपत्र में नगरपालिका समिति, शाहाबाद के अध्यक्ष के रूप में विधिवत राजपत्रित किया गया था। श्री खैरती लाई प्रतिवादी संख्या 2 के चचेरे भाई जग वसाया ने याचिकाकर्ता को राष्ट्रपति के रूप में कार्य करने से इस आधार पर रोकते हुए निषेधाज्ञा के लिए एक मुकदमा दायर किया कि वह सरकारी राजपत्र में राष्ट्रपति के रूप में अपने चुनाव की अधिसूचना और प्रकाशन से पहले इस तरह से कार्य नहीं कर सकता था।

7. 8 सितंबर, 1967 को याचिकाकर्ता की अध्यक्षता में हुई एक बैठक में नगरपालिका समिति ने एक प्रस्ताव पारित किया, जिसमें श्री खैरती लाई से चुंगी शुल्क के रूप में 2,999.98 रुपये की मांग की गई, जिसका भुगतान उनके द्वारा नहीं किया गया था। इस संकल्प के अनुसरण में, श्री खैरती लाई प्रतिवादी को एक विशेष मांग नोटिस भेजा गया था।

8. हरियाणा सरकार के सचिव श्री खैरती लाल के प्रभाव में कार्य करते हुए, स्थानीय-स्वशासन विभाग (प्रतिवादी संख्या 1) ने अधिनियम की धारा 22/16 के तहत 18 जनवरी, 1968 को एक नोटिस जारी किया, जिसमें याचिकाकर्ता को कारण बताने के लिए कहा गया कि उसे नगरपालिका समिति के अध्यक्ष पद / सदस्यता से क्यों नहीं हटाया जाना चाहिए। इस नोटिस में आरोप लगाया गया था कि उन्होंने अपने चुनाव को वास्तव में अधिसूचित किए जाने से पहले और आवश्यक शपथ लेने से पहले अधिनियम की धारा 24 (1) का उल्लंघन करते हुए नगरपालिका समिति के अध्यक्ष के रूप में अपने कर्तव्यों का पालन किया। यह जोड़ा गया कि इस अवधि के दौरान याचिकाकर्ता ने कई अनियमितताएं की थीं जो शक्तियों के घोर दुरुपयोग के समान थीं। इस नोटिस के साथ तथ्यों का एक विवरण संलग्न किया गया था जिसमें 'शक्तियों के घोर दुरुपयोग' वाली नौ अनियमितताओं का उल्लेख किया गया था। याचिकाकर्ता ने 13 फरवरी, 1968 को करनाल के उपायुक्त के माध्यम से

इस नोटिस का जवाब भेजा। उन्होंने प्रतिवादी नंबर 1 को इसकी एक अग्रिम प्रति भी भेजी। कारण बताओ नोटिस पर याचिकाकर्ता का जवाब सरकार (प्रतिवादी संख्या 1) को 15 या 16 फरवरी, 1968 को प्राप्त हुआ था। करनाल के उपायुक्त ने हालांकि उप-विभागीय अधिकारी (नागरिक) को कारण बताओ नोटिस के जवाब में याचिकाकर्ता द्वारा उठाए गए कुछ मामलों के संबंध में रिपोर्ट करने के लिए कहा। इससे पहले कि उपखंड अधिकारी अपनी बात भेज पाते। प्रतिवादी संख्या 1 द्वारा याचिकाकर्ता को समिति के अध्यक्ष/सदस्यता से केवल इस *आधार पर* हटा दिया गया था कि याचिकाकर्ता ने अपने चुनाव को अनुमोदित, अधिसूचित और प्रकाशित करने से पहले और अपने पद के प्रति निष्ठा की शपथ लेने से पहले राष्ट्रपति के रूप में अपने कर्तव्यों में प्रवेश किया था। इस आदेश (अनुलग्नक 'ए-8') को निम्नलिखित आधारों पर अवैध करार दिया जा रहा है

1. अपने चुनाव के बाद और सरकार द्वारा अपने नाम की मंजूरी और अधिसूचना से पहले राष्ट्रपति के रूप में कार्य करने और काम करने में याचिकाकर्ता का आचरण अधिनियम की धारा 22 के अर्थ के भीतर किसी भी 'प्रमुख दुरुपयोग' के बराबर नहीं था।

2. याचिकाकर्ता ने अपनी अधिसूचना से पहले राष्ट्रपति के रूप में कार्य किया था, उस सलाह पर जो उन्हें दी गई थी, और भले ही यह गलत था, यह निर्णय की त्रुटि के समान था। याचिकाकर्ता को समिति के 13 सदस्यों में से 7 के बहुमत से अध्यक्ष के रूप में चुना गया था, और इस तरह से अधिसूचना और उसके चुनाव के प्रकाशन में देरी करके, प्रतिवादी नंबर 1 ने *दुर्भावनापूर्ण* और मनमाने तरीके से काम किया था। प्रतिवादी नंबर 1 को अपनी गलतियों और कर्तव्य की चूक का लाभ उठाने और इसके लिए याचिकाकर्ता को दंडित करने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। प्रकाशन में देरी करने का एकमात्र उद्देश्य श्री खरैती लाई प्रतिवादी और निवर्तमान अध्यक्ष श्री रघबीर चंद को यथासंभव बनाए रखना था।

3. लागू आदेश यांत्रिक रूप से पारित किया गया था क्योंकि इसमें अधिनियम की धारा 22 और 16 आई (1) (ई) के तहत कार्रवाई की गई थी जो अलग-अलग आवश्यकताओं के साथ अलग-अलग धाराएं थीं।

5.याचिकाकर्ता को दो साल की भविष्य की अवधि के लिए उनकी प्रस्तावित अयोग्यता का कोई नोटिस नहीं दिया गया था। नगरपालिका समिति के चुनाव 10 मार्च, 1968 को होने वाले थे। इसलिए, याचिकाकर्ता को चुनाव लड़ने से रोककर चुनाव लड़ रहे मेसर्स रघबीर चंद और खरैती लाई की मदद करने के लिए यह आदेश पारित किया गया था। इस प्रकार आक्षेपित

आदेश एक संपार्श्विक उद्देश्य के लिए पारित किया गया है और यह क़ानून के साथ धोखाधड़ी के समान है।

9. हरियाणा राज्य (प्रतिवादी संख्या 1) ने रिटर्न में स्वीकार किया कि याचिकाकर्ता को नगरपालिका समिति द्वारा अपनी बैठक में अध्यक्ष के रूप में चुना गया था और लागू अधिसूचना के माध्यम से उस कार्यालय से हटा दिया गया था। हालांकि, इस बात से इनकार किया गया कि प्रतिवादी नंबर 2 श्री खरैती लाल का स्थानीय निकाय विभाग के साथ कोई प्रभाव था। हालांकि, प्रतिवादी ने कहा कि याचिकाकर्ता ने अपने चुनाव से पहले राष्ट्रपति के रूप में काम करना शुरू कर दिया था, जिसे राज्य सरकार द्वारा अनुमोदित किया जा सकता है और उप-विभागीय अधिकारी प्रथम (नागरिक), थानेसर के निर्देशों के बावजूद सरकारी राजपत्र में प्रकाशित आवश्यक अधिसूचना एक सदस्य और समिति के अध्यक्ष के रूप में अपने पद का घोर दुरुपयोग है। इस बात से इनकार किया गया कि राजपत्र में अधिसूचना जारी करना और प्रकाशित करना जानबूझकर *दुर्भावनापूर्ण* इरादे से या सर्वश्री खरैती लाल और रघबीर चंद की मदद करने के लिए किया गया था। इस बात से इनकार किया गया कि भविष्य की अवधि के लिए उनकी प्रस्तावित अयोग्यता का कोई नोटिस उन्हें नहीं दिया गया था। यह कहा जाता है कि इस तरह का नोटिस वास्तव में याचिकाकर्ता को दिया गया था।

10. हालांकि, श्री खरैती लाल प्रतिवादी ने कोई रिटर्न दाखिल नहीं किया है।

11. धारा 16, 20, 21 (2), 22 और 24 में निहित अधिनियम के भौतिक प्रावधानों को निम्नानुसार पुन: प्रस्तुत किया जा सकता है: –

सदस् यों को हटाने के संबंध में राज् य सरकार की शक्तियां :-

1. राज्य सरकार, अधिसूचना द्वारा, समिति के किसी भी सदस्य को हटा सकती है-

(a) --- ---------------

(b) --------------------

(c)------ --------------

(d) --------- -------------

(e)<u>यदि, राज्य सरकार की राय</u> में, उसने समिति के सदस्य के रूप में *अपने पद का खुलेआम* दुरुपयोग किया है या लापरवाही या कदाचार के माध्यम से समिति के किसी धन या संपत्ति के नुकसान, या दुरुपयोग के लिए जिम्मेदार रहा है।

20 राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति का चुनाव या नियुक्ति।

(1) प्रत्येक समिति समय-समय पर अपने सदस्यों में से एक को अध्यक्ष चुनेगी, और इस प्रकार निर्वाचित सदस्य, *यदि राज्य सरकार द्वारा अनुमोदित* किया जाता है, तो समिति का अध्यक्ष बन जाएगा:

बशर्ते कि समिति, एक अध्यक्ष का चुनाव करने और राज्य सरकार को अनुमोदन के लिए उसका नाम प्रस्तुत करने के बजाय, राज्य सरकार को उसके सदस्यों में से एक राष्ट्रपति नियुक्त करने के लिए आवेदन कर सकेगा, और यह कि राज्य सरकार, अधिसूचना द्वारा, किसी समिति को इस उप-धारा के संचालन से बाहर कर सकती है, और यह कि इनमें से किसी भी मामले में, यदि राष्ट्रपति के कार्यालय में रिक्ति होने से एक महीने के भीतर कोई चुनाव नहीं किया गया है, या यदि निर्वाचित व्यक्ति अनुमोदित नहीं किया जाता है, तो राज्य सरकार, यदि, वह उचित समझे, समिति के सदस्यों में से एक को अध्यक्ष नियुक्त कर सकती है।

(2) प्रत्येक समिति, समय-समय पर, अपने एक या दो सदस्यों को उपाध्यक्ष या उपाध्यक्ष भी चुन सकती है, और जब दो उपाध्यक्ष एक ही तारीख को चुने जाते हैं, तो घोषणा करेगी कि उनमें से किसे वरिष्ठ माना जाएगा।

(3) इस धारा के अधीन अध्यक्ष या उपराष्ट्रपति बनने के लिए निर्वाचित या नियुक्त प्रत्येक सदस्य को कार्यालय द्वारा निर्वाचित या नियुक्त किया जा सकता है यदि उसे उसी तरह समिति का सदस्य नियुक्त किया गया था।

21 राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति की पदावधि।

(2)नाम से निर्वाचित या नियुक्त या अपने पद के आधार पर निर्वाचित राष्ट्रपति की पदावधि तीन वर्ष या सदस्य के रूप में उसकी पदावधि का अवशेष, जो भी कम हो, होगी।

22.' *राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति का इस्तीफा:*

जब भी कोई राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति समिति को लिखित रूप में अपना स्थान या निविदाएं खाली करता है, अपने पद से इस्तीफा देता है, तो वह अपना कार्यालय खाली कर देगा; और किसी भी राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति को राज्य सरकार द्वारा उसकी शक्तियों के दुरुपयोग या अपने कर्तव्यों का पालन करने में आदतन विफलता के आधार पर या समिति के दो-तिहाई सदस्यों द्वारा पारित उसे

हटाने के अनुरोध वाले प्रस्ताव के अनुसरण में पद से हटाया जा सकता है:

परन्तु राज्य सरकार द्वारा उसे हटाने की अधिसूचना जारी करने से पहले, उसे हटाने का कारण उसे एक पंजीकृत पत्र के माध्यम से सूचित किया जाएगा जिसमें उसे इक्कीस दिनों के भीतर लिखित में स्पष्टीकरण देने के लिए आमंत्रित किया जाएगा और यदि उक्त पंजीकृत पत्र भेजे जाने के इक्कीस दिनों के भीतर (सरकार के उपयुक्त सचिव) के कार्यालय में ऐसा कोई स्पष्टीकरण प्राप्त नहीं होता है, राज्य सरकार उसे हटाने की अधिसूचना जारी कर सकती है।

24. चुनावों, नियुक्तियों और रिक्तियों की अधिसूचनाएं।

(1) किसी समिति के सदस्य या अध्यक्ष के प्रत्येक निर्वाचन और नियुक्ति को प्रथम श्रेणी की नगरपालिका के मामले में, राज्य सरकार द्वारा, और द्वितीय या तृतीय श्रेणी की नगरपालिका के मामले में, उपायुक्त द्वारा अधिसूचित किया जाएगा, और कोई भी सदस्य तब तक अपने कर्तव्यों का पालन नहीं करेगा जब तक कि उसका निर्वाचन या नियुक्ति इस प्रकार अधिसूचित नहीं की जाती है। भारतीय शपथ अधिनियम, 1873 में निहित किसी बात के होते हुए भी, उन्होंने समिति की बैठक में भारत के प्रति अपनी निष्ठा की शपथ या प्रतिज्ञान निम्नलिखित रूप में लिया है या किया है, अर्थात् :-

("1. ए.बी., नगरपालिका समिति का सदस्य निर्वाचित (या नियुक्त) होने के बाद- सत्यनिष्ठा से शपथ लेता है (या पुष्टि करता है) कि मैं कानून द्वारा स्थापित , भारत और भारत के संविधान के प्रति वफादार रहूंगा और सच्ची निष्ठा रखूंगा और मैं ईमानदारी से उन कर्तव्यों का निर्वहन करूंगा जिन पर मैं प्रवेश करने वाला हूं।

(2) यदि ऐसा कोई व्यक्ति अपने निर्वाचन या नियुक्ति की अधिसूचना की तारीख के तीन महीने के भीतर उपधारा (1) द्वारा अपेक्षित शपथ या प्रतिज्ञान को छोड़ देता है या लेने से इनकार करता है, जैसा कि मामला हो, तो उसे तब तक अमान्य माना जाएगा जब तक कि राज्य सरकार किसी कारण से, जिसे वह पर्याप्त समझे, उस अवधि को नहीं बढ़ाती है जिसके भीतर ऐसी शपथ या प्रतिज्ञान लिया जा सकता है या किया जा सकता है।

^g) * * * ^ $ ^ $ *

12. याचिकाकर्ता के वकील सच्चर का पहला तर्क यह है कि उपरोक्त उद्धृत धाराओं या अधिनियम

के किसी अन्य प्रावधान में ऐसा कुछ भी नहीं है जो अपनी बैठक में अध्यक्ष के रूप में चुनी गई नगरपालिका समिति के सदस्य को उसके चुनाव से पहले अध्यक्ष के रूप में कार्य करने से रोकता है क्योंकि यह आधिकारिक राजपत्र में अधिसूचित है। यह तर्क दिया जाता है कि अधिसूचना से पहले अपने कर्तव्यों में प्रवेश करने के खिलाफ अधिनियम की धारा 24 (1) में निहित अवरोध केवल एक समिति के सदस्य तक ही सीमित है, और यह समिति के निर्वाचित अध्यक्ष तक विस्तारित नहीं होता है- इस तथ्य पर जोर दिया गया है कि जबकि धारा 24 की उप-धारा (1) के शुरुआती भाग में राज्य सरकार पर हर चुनाव को अधिसूचित करने का कर्तव्य लगाया गया है और किसी समिति के सदस्य *या अध्यक्ष* की नियुक्ति, उपधारा (1) के निषेधात्मक खंड में, '*या* राष्ट्रपति' शब्दों को दोहराए बिना केवल 'सदस्य' शब्द का उपयोग किया गया है। श्री सच्चर कहते हैं कि इस खंड से 'या राष्ट्रपति' शब्दों को हटाना जानबूझकर किया गया है और विधान द्वारा निर्वाचित राष्ट्रपति को एकमात्र शब्द 'सदस्य' में शामिल करना विधायिका का इरादा नहीं है।

13. दूसरी ओर, प्रतिवादी राज्य के विद्वान वकील का तर्क है कि धारा 24 की उपधारा (1) के दूसरे भाग में 'सदस्य' शब्द में एक सदस्य भी शामिल है जिसे समिति के अध्यक्ष के रूप में चुना या नियुक्त किया गया है और यह कि 'या राष्ट्रपति' शब्दों को दोहराना आवश्यक नहीं था क्योंकि केवल समिति के सदस्य को अध्यक्ष के रूप में चुना जा सकता है। यह बनाए रखा जाता है कि धारा 24 की व्याख्या अलग से नहीं की जानी चाहिए; यदि इसे धारा 20 (1) के साथ पढ़ा जाना चाहिए जो दर्शाता है कि एक सदस्य *अपने चुनाव के तुरंत बाद राष्ट्रपति* नहीं बनता है, बल्कि *केवल तभी जब* उसके चुनाव को राज्य सरकार द्वारा अनुमोदित *किया जाता है।* यह तर्क दिया जाता है कि जब तक इस तरह की मंजूरी नहीं दी जाती है, तब तक संबंधित व्यक्ति को राष्ट्रपति के कर्तव्यों में प्रवेश करने से सकारात्मक रूप से मना किया जाता है और यदि वह जानबूझकर ऐसा करता है, तो उसका आचरण धारा 22 के अर्थ के भीतर 'अपनी शक्तियों का दुरुपयोग' होगा और धारा 16 (1) (ई) के चिंतन के भीतर एक सदस्य के रूप में अपने पद का घोर दुरुपयोग भी होगा।

14. यह सामान्य आधार है कि याचिकाकर्ता का नगरपालिका समिति के *सदस्य के रूप में* चुनाव विधिवत राजपत्रित और अधिसूचित किया गया था और उसने नगरपालिका समिति के *सदस्य के रूप में* अपने कर्तव्यों में प्रवेश करने से पहले आवश्यक शपथ ली थी। हालांकि, राष्ट्रपति *के रूप में चुने जाने के* बाद उन्होंने निष्ठा की कोई शपथ नहीं ली थी।

15. मैं श्री सच्चर से सहमत हूं कि धारा 24 की उपधारा (1) का निषेधात्मक भाग जो शपथ ग्रहण को पद ग्रहण करने के लिए एक शर्त बनाता है, समिति के निर्वाचित अध्यक्ष पर लागू नहीं होता है; इसका संचालन केवल 'सदस्य' तक ही सीमित है। इस भेद के पीछे कारण यह प्रतीत होता है कि एक सदस्य जो निर्वाचित राष्ट्रपति है, ने समिति के सदस्य के रूप में अपने कर्तव्यों में प्रवेश करने से पहले ही निष्ठा की शपथ ले ली है। उनके मामले में राष्ट्रपति के रूप में अपने कर्तव्यों में प्रवेश करने से पहले उन्हें फिर से वही शपथ लेने के लिए कहना महज एक मूर्खता होगी। मेरे विचार से इसीलिए धारा 24 की उपधारा (1) के दूसरे भाग में सदस्य शब्द के तुरंत बाद या उसमें निर्धारित शपथ के रूप में 'या राष्ट्रपति' शब्द को दोहराया नहीं गया है। एक *सदस्य* और एक *राष्ट्रपति* के मामले के बीच यह अंतर नगरपालिका चुनाव नियम, 1952 के नियम 5 और 47 में भी परिलक्षित होता है। नियम 5 के अनुसार उपायुक्त या इस संबंध में उनके द्वारा नियुक्त किसी राजपत्रित अधिकारी को सदस्यों को निष्ठा की शपथ दिलाने और राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति के चुनाव के लिए नवगठित समिति की पहली बैठक बुलानी होगी। नियम 47 (2) निर्वाचित राष्ट्रपति को *चुनाव की तारीख से पद ग्रहण करने का आदेश देता है।* यह इस प्रकार है-

X

"47(2). निर्वाचित व्यक्ति या व्यक्ति, राष्ट्रपति के निर्वाचन के मामले में, अधिनियम की धारा 20 की उपधारा (1) के उपबंधों के अधीन रहते हुए, *निर्वाचन की तारीख से पद ग्रहण करेगा।*

16. धारा 20 और नियम 47(2) में केवल तभी सामंजस्य स्थापित किया जा सकता है जब उनका अर्थ यह हो कि राष्ट्रपति के निर्वाचन और राज्य सरकार द्वारा उसके अनुमोदन के बीच के अंतराल के दौरान, वह इस शर्त के अधीन राष्ट्रपति के रूप में कार्य कर सकता है कि यदि उसका निर्वाचन राज्य सरकार द्वारा अनुमोदित नहीं किया जाता है तो वह कार्य करना बंद कर देगा।

17. सच्चर ने आगे तर्क दिया कि भले ही यह तर्क के लिए मान लिया जाए कि राष्ट्रपति के रूप में उनके चुनाव का प्रकाशन या अधिसूचना, उनके पद ग्रहण करने के लिए एक शर्त थी, तो भी दो महीने की अवधि के लिए धारा 24 (1) का इस तरह का उल्लंघन, धारा 16 (1) के अर्थ के भीतर "राष्ट्रपति के रूप में अपनी शक्तियों का दुरुपयोग" के "सदस्य के रूप में पद का घोर दुरुपयोग" नहीं माना जाएगा। अधिनियम की धारा 2) और धारा 20 श्री सच्चर कहते हैं, उस मामले में भी, यह मात्र अविवेक का कार्य होगा, प्रावधान केवल निर्देशिका है और अनिवार्य नहीं है। अपने तर्क के समर्थन में, उन्होंने उल्लेख किया है ***कार्तिक चंद्र* बनाम जादू मणि बेहरा *और अन्य*[1] *विश्वनाथ और एक***

1A.I.R 1952 Orissa 251.

अन्य बनाम राज्य और अन्य[2]***, नोराता राम* बनाम पंजाब राज्य**[3]**, सत्य देव** ***बनाम पंजाब राज्य और अन्य***[4]***,* पन्ना लाल** ***बनाम* सरकार के सचिव**[5]***, हरियाणा, स्थानीय निकाय विभाग , चंडीगढ़ और अन्य* और *सरदारी लाल*** v ***हरियाणा राज्य और अन्य***[6]

18. मुझे इस दलील में काफी बल नजर आता है। यदि नगरपालिका चुनाव नियमों और पंजाब नगरपालिका अधिनियम के विभिन्न प्रावधानों को एक-दूसरे के साथ सद्भाव में व्याख्या की जानी है, तो यह बिल्कुल स्पष्ट है, जैसा कि पहले ही देखा जा चुका है, कि एक सदस्य के मामले के विपरीत जो अधिसूचना के प्रकाशन के बाद और निष्ठा की शपथ लेने के बाद ही अपने कर्तव्यों में प्रवेश करता है, निर्वाचित राष्ट्रपति अपने निर्वाचन की तारीख से नियम 47(2) के अधीन इस शर्त के अधीन कार्य करना शुरू कर सकता है कि यदि राज्य सरकार द्वारा उसका निर्वाचन अस्वीकृत कर दिया जाता है तो वह इस प्रकार कार्य करना बंद कर देगा।

19. जैसा भी हो, धारा 24 की उप-धारा (1) केवल सरकार द्वारा एक सार्वजनिक कर्तव्य के प्रदर्शन को निर्धारित करती है, अर्थात्, किसी सदस्य या राष्ट्रपति के चुनाव और नियुक्ति को प्रकाशित और अधिसूचित करना। मैक्सवेल ने अपने 'संविधियों की व्याख्या', ग्यारहवें संस्करण में, पृष्ठ 360 पर निम्नानुसार टिप्पणी की है: -

> "जहां किसी क़ानून के राय सार्वजनिक कर्तव्य के प्रदर्शन से संबंधित होते हैं, और जहां उनकी उपेक्षा में किए गए कृत्यों की अमान्यता उन व्यक्तियों के लिए गंभीर सामान्य असुविधा या अन्याय का काम करेगी, जिन पर कोई नियंत्रण नहीं है, जिन्हें कर्तव्य सौंपा गया है, फिर भी विधायिका के आवश्यक उद्देश्यों को बढ़ावा नहीं देते हैं, ऐसे राय आम तौर पर उन लोगों के मार्गदर्शन और सरकार के लिए केवल निर्देशों के रूप में समझे जाते हैं जिन पर कर्तव्य है। लगाया गया, या, दूसरे शब्दों में, केवल निर्देशिका के रूप में।

20. इस सिद्धांत को **दत्तात्रेय मोरेश्वर *बनाम* बॉम्बे राज्य और अन्य**[7] *में सर्वोच न्यायालय के लॉर्डशिप द्वारा अनुमोदित किया गया था* । एस. आर. दास, न्यायमूर्ति (जैसा कि वह उस समय थे) द्वारा की

2 A.I.R 1957 RAJ.75
3 1964 P.L.R 226
4 1964 P.L.R 381.
5 1967 Curr. Law Journal 828
6 1968 Curr. Law Journal 218
7 A.I.R 1952 S.C. 181

गई निम्नलिखित टिप्पणियों को लाभ के साथ उद्धृत किया जा सकता है: –

"यह अच्छी तरह से तय है कि आम तौर पर सार्वजनिक कर्तव्यों का निर्माण करने वाले क़ानून के प्रावधान निर्देशिका हैं और निजी अधिकार प्रदान करने वाले अनिवार्य हैं।

21. वर्तमान मामले में भी, धारा 24 (1) एक सार्वजनिक कार्य करने के लिए केवल एक औपचारिकता निर्धारित करती है, अर्थात, चुनाव के परिणाम का प्रकाशन। इसलिए, यह प्रावधान केवल निर्देशिका है, खासकर जब विधायिका ने कानून में स्पष्ट रूप से कुछ भी निर्धारित नहीं किया है कि राष्ट्रपति ऐसे प्रकाशन के बाद ही पद ग्रहण करेगा।

22. ***विश्वनाथ और अन्य* बनाम *राज्य और अन्य* (2),** वांचू, न्यायमूर्ति , (जैसा कि वह तब थे) और दवे, न्यायमूर्ति ने कहा कि राजस्थान टाउन म्यूनिसिपल एक्ट (1951 का 23) की धारा 22 (14) केवल निर्देशिका थी। वह प्रावधान इस प्रकार था -

"इस धारा के प्रावधानों के अनुसार चुने गए या नामित सभी अध्यक्षों या उपाध्यक्षों के नाम राजस्थान राजपत्र में जल्द से जल्द प्रकाशित किए जाएंगे।

विद्वान न्यायाधीशों ने आगे टिप्पणी की:-

"इस उप-धारा के शब्दों पर विचार करते हुए, यह स्पष्ट है कि उप-धारा केवल निर्देशिका है, और जनता की जानकारी के प्रयोजनों के लिए राजपत्र में प्रकाशन की परिकल्पना की गई है।

यदि विधायिका का यह इरादा था कि कोई भी अध्यक्ष या उपाध्यक्ष तब तक पद ग्रहण नहीं करेगा जब तक कि उसका नाम राजपत्र में प्रकाशित नहीं हो जाता, तो कोई कारण नहीं था कि विधायिका को उप-धारा (14) में ऐसा नहीं कहना चाहिए था, जब प्रकाशन के संबंध में उसके द्वारा एक विशिष्ट प्रावधान किया जा रहा था।

23. उस मामले में यह भी कहा गया था कि राजस्थान टाउन म्युनिसिपल बोर्ड अध्यक्ष चुनाव नियमों का नियम 13, जिसमें कहा गया है कि निर्वाचित अध्यक्ष राजस्थान राजपत्र में अपना नाम प्रकाशित होने के बाद ही अध्यक्ष के रूप में अपने कर्तव्यों का निर्वहन कर सकता है, राजस्थान नगर नगरपालिका अधिनियम के विपरीत था, जिसने राजपत्र में प्रकाशन को अध्यक्ष द्वारा पद ग्रहण

करने के लिए आवश्यक प्रारंभिक नहीं बनाया था।

24. यह सच है कि राजस्थान अधिनियम की धारा 22 (14) की भाषा पंजाब नगरपालिका अधिनियम की धारा 24 (1) की भाषा के समान नहीं है और उस मामले में पंजाब अधिनियम की धारा 21 के अनुरूप किसी भी प्रावधान का कोई संदर्भ नहीं दिया गया था, जिसके लिए निर्वाचित सदस्य के अध्यक्ष बनने के लिए एक आवश्यक प्रारंभिक के रूप में राज्य सरकार के अनुमोदन की आवश्यकता थी। लेकिन इससे मेरे दिमाग में कोई फर्क नहीं पड़ेगा। मेरे सामने जो मामला है, वह इसके विपरीत है। इस मामले में, पंजाब चुनाव नियम 47 (2) के तहत निर्वाचित राष्ट्रपति को अपने चुनाव की तारीख से अपना पद ग्रहण करना आवश्यक है। राज्य सरकार द्वारा अनुमोदन प्रदान करना और राजपत्र में अधिसूचना का प्रकाशन मंत्रिस्तरीय कार्य हैं जो आवश्यक रूप से चुनाव के समकालीन नहीं हो सकते हैं और उचित समय के भीतर उचित समय में पालन करना होगा। विधानमंडल का यह इरादा नहीं था कि राष्ट्रपति के निर्वाचन और राज्य सरकार द्वारा उस चुनाव के अनुमोदन और अधिसूचना के बीच इस अंतराल के दौरान, नगरपालिका समिति का कार्यकरण केवल ऐसे अनुमोदन और अधिसूचना के अभाव में रुका रहे।

25. भले ही यह तर्क के लिए मान लिया जाए कि धारा 24 की उप-धारा (1) के दूसरे भाग में 'सदस्य' शब्द में निर्वाचित राष्ट्रपति शामिल हैं और याचिकाकर्ता ने अपने चुनाव की अधिसूचना से पहले राष्ट्रपति के रूप में अपने कर्तव्यों को दर्ज किया है, क्योंकि इस तरह से उन निर्देशिका प्रावधानों का उल्लंघन किया गया है, जिसकी व्याख्या के बारे में ईमानदार हो सकता है, तब भी यह नहीं कहा जा सकता था कि ऐसा करने में वह अधिनियम की धारा 20 के चिंतन के भीतर धारा 18 (1) (ई) के अर्थ के भीतर "एक सदस्य के रूप में अपने पद का घोर दुरुपयोग" या "राष्ट्रपति के रूप में अपनी शक्तियों का दुरुपयोग" करने का दोषी था। .

26. जैसा कि टेक चंद, न्यायमूर्ति ने ***पन्ना लाल* बनाम हरियाणा सरकार के सचिव*, स्थानीय 'सरकारी विभाग, चंडीगढ़ और अन्य (5) में बताया है*** , धारा 16 (1) (ई) में 'अपने पद का दुरुपयोग' करने से पहले 'खुलेआम' शब्द की अनदेखी नहीं की जा सकती है। यह पद के दुरुपयोग की प्रकृति पर जोर दिए जाने का संकेत देता है जो परिस्थितियों में स्पष्ट, कुख्यात, विशाल, निंदनीय या दुष्ट होना चाहिए।

27. एक सदस्य के रूप में अपने पद के घोर दुरुपयोग के खंड का अर्थ यह है कि समिति के किसी सदस्य द्वारा अपने कर्तव्य की अवहेलना करते हुए इस तरह के कार्य या कार्य करना जो एक

तर्कसंगत दिमाग को झटका देगा। एस ***जोगिंदर सिंह* बनाम *पंजाब राज्य और एक अन्य***[8] देखें।

28. प्रस्ताव के समर्थन में पर्याप्त अधिकार है कि नगरपालिका अधिनियम या उसके तहत बनाए गए नियमों का किसी सदस्य द्वारा किया गया प्रत्येक उल्लंघन ऐसे सदस्य द्वारा अपने पद का दुरुपयोग नहीं है।

29. इस प्रकार ***सत्य देव बनाम पंजाब राज्य और एक अन्य* (4)** मामले में दुआ और हरबंस सिंह, न्यायमूर्तियों ने कहा कि किसी व्यक्ति के नगरपालिका समिति का सदस्य बनने से बहुत पहले अस्तित्व में आए अतिक्रमण को जारी रखना और उसे ध्वस्त नहीं करना, एक कार्य नहीं कहा जा सकता है, जो सीधे सदस्य के रूप में उसकी स्थिति से जुड़ा हुआ है।

30. ***वरयाम चंद* बनाम *पंजाब राज्य*, 1961** के सिविल रिट नंबर 535 में, सदस्य के खिलाफ आरोप यह था कि वह नगरपालिका समिति से भवन योजना को मंजूरी दिए बिना एक दुकान में एक दरवाजा और एक दीवार बनाने में कामयाब रहा था। ग्रोवर, जे, जिन्होंने मामले का फैसला किया, ने कहा: –

> " यह देखना संभव नहीं है कि बिना मंजूरी के निर्माण करने में समिति के सदस्य के रूप में पद का घोर दुरुपयोग कैसे शामिल है, क्योंकि कोई भी व्यक्तिगत घर-मालिक इस तथ्य के बावजूद इस तरह का निर्माण कर सकता है, चाहे वह समिति का सदस्य हो या नहीं। एक सदस्य के रूप में पद का ऐसा दुरुपयोग केवल सदस्य की ओर से कुछ और कार्य या कृत्यों द्वारा स्थापित किया जा सकता है, जिसके द्वारा उसने समिति के अधिकारी को अनधिकृत निर्माण किए जाने के दौरान हस्तक्षेप करने से रोका हो या ऐसे निर्माण के बाद कोई कार्रवाई न की हो। याचिकाकर्ता के खिलाफ रिटर्न या आरोप में या अंतिम आदेश में कोई आरोप या सुझाव नहीं है कि उसने सदस्य के रूप में अपनी स्थिति का कोई अनुचित लाभ उठाया।

31. मेरे समक्ष के मामले में भी आक्षेपित आदेश में यह नहीं कहा गया है कि याचिकाकर्ता ने अपने निर्वाचन के बाद और राजपत्र में अपने नाम की अधिसूचना से पहले राष्ट्रपति के रूप में कार्य करते हुए सदस्य के रूप में अपने पद का कोई अनुचित लाभ उठाया, या राष्ट्रपति के रूप में अपने पद के रंग के तहत कोई विशेष अनियमितता या प्रतिशोधात्मक कार्य किया।

32. **सरदारी लाई *बनाम* हरियाणा राज्य और एक अन्य *(6)*** *मामले में* , याचिकाकर्ता 1961 से समिति से संबंधित संपत्ति के नगरपालिका समिति के तहत पट्टेदार थे। उन्हें 1964 में समिति के

[8] 1963 P.L.R 217.

सदस्य के रूप में चुना गया था, लेकिन पट्टेदार के रूप में जारी रखने के लिए समिति का सदस्य बनने के दो महीने के भीतर उपायुक्त की मंजूरी प्राप्त नहीं की और इस प्रकार नगरपालिका अधिनियम की धारा 48 के प्रावधानों का उल्लंघन किया। धारा 48 के इस उल्लंघन के कारण, उन्हें अधिनियम की धारा 16 के तहत राज्य सरकार द्वारा समिति की सदस्यता से हटा दिया गया था। पीडी शर्मा जे ने कहा कि उपायुक्त की मांग मंजूरी प्राप्त करने में याचिकाकर्ता की विफलता एक सदस्य के रूप में अपने पद के घोर दुरुपयोग की तुलना में अज्ञानता के कारण अधिक थी। विद्वान न्यायाधीश द्वारा की गई निम्नलिखित टिप्पणियां प्रासंगिक हैं :-

"यह पूरी तरह से तय है कि किसी के भी उल्लंघन, अधिनियम के प्रावधानों या सदस्य द्वारा उसके तहत बनाए गए उप-नियमों के हर उल्लंघन को समिति के सदस्य के रूप में उसकी शक्ति के घोर दुरुपयोग के रूप में वर्गीकृत नहीं किया जा सकता है।

33. यह भी तय किया गया है कि किसी सदस्य ने अपने पद का घोर दुरुपयोग किया है या नहीं, इस संबंध में राज्य सरकार का निर्णय उच्च न्यायालय द्वारा जांच के लिए हमेशा खुला रहता है।

34. उपरोक्त कानून होने के नाते, याचिकाकर्ता द्वारा पंजाब नगरपालिका अधिनियम के निर्देशिका प्रावधान का उल्लंघन, सरकार द्वारा उनके नाम को अनुमोदित करने और राजपत्र में प्रकाशित करने से पहले राष्ट्रपति के रूप में अपने कर्तव्यों को दर्ज करने को पंजाब नगरपालिका अधिनियम, 1911 की धारा 16 (1) (ई) और धारा 20 के तहत क्रमशः 'सदस्य के रूप में अपने पद का घोर दुरुपयोग' या 'शक्ति का दुरुपयोग' नहीं कहा जा सकता है।

35. इसलिए, मैं इस याचिका को स्वीकार करता हूं और आक्षेपित आदेश को रद्द करता हूं। मामले की परिस्थितियों में, लागत के रूप में कोई आदेश नहीं होगा।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

ओमेश

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

चंडीगढ़ न्यायिक अकादमी